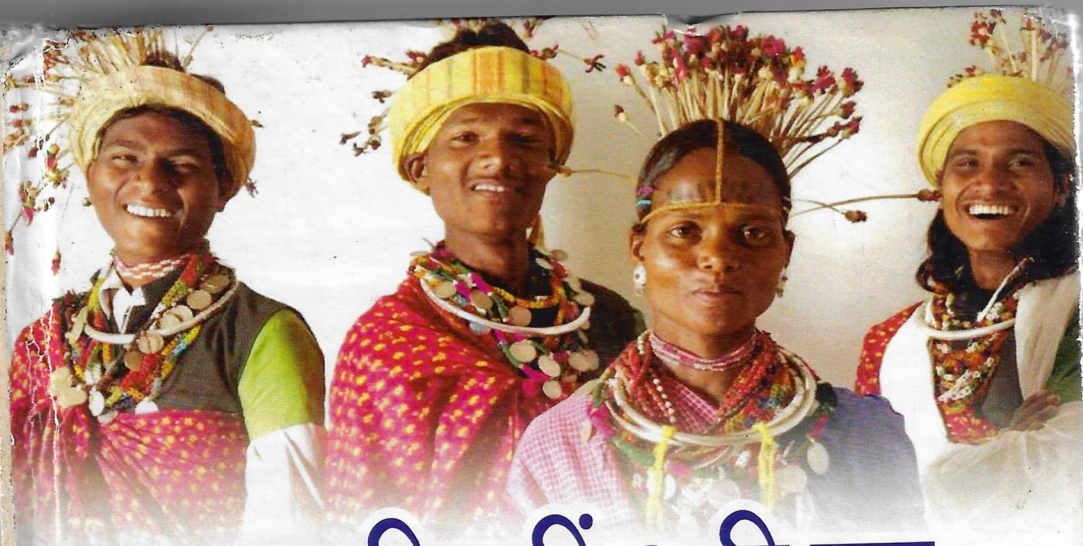

इक्कीसवीं सदी का आदिवासी हिंदी साहित्य

(स्वरूप एवं समीक्षा)

Primordial Hindi Literature of 21th Century

संपादक

प्रो. डॉ. शशिकांत 'सावन'

(डी.लिट्.)

21. **अस्मिता संकट से जूझता आदिवासी समुदाय**
(विशेष संदर्भः वह बस धूल थी)
– *डॉ. जयंती सिंह* (शांतिनिकेतन, कोलकाता, पं. बंगाल) 165

22. **'भगोरिया की बाट' में चित्रित आदिवासी समाज**
– *कुमार सत्यम* (कोलकाता, पं. बंगाल) 173

23. **रूदाली: मानवीय जिजिविषा की अंतहीन दास्तान**
– *फरीदा खातुन* (कोलकाता, पं. बंगाल) 178

24. **आदिवासी स्त्री की पीड़ा, संघर्ष और अस्मिता**
(नगाड़े की तरह बजतें शब्द)
– *परमजीत कुमार पंडित* (कोलकाता, पं. बंगाल) 186

25. **हिन्दी साहित्य में आदिवासी महिलाओं का योगदान**
– *डॉ. जयंतिलाल बी. बारीस* (वापी, गुजरात) 197

26. **रेत उपन्यास में चित्रित आदिवासी कंजरभाट समुदाय**
– *श्रीमती प्रतिभा देवराम जाधव* (अमलनेर, महाराष्ट्र) 215

27. **आदिवासी कविताओं में व्यक्त जीवन का यथार्थ चित्रण**
– *प्रा. डॉ. कल्पना राजेन्द्र पाटील* (अमलनेर, महाराष्ट्र) 223

28. **भारतीय आदिवासी एवं आदिम संथाली कैनवासी**
काव्यः नगाड़े की तरह बजते शब्द
– *प्रो. डॉ. शशिकांत 'सावन'* (अमलनेर, महाराष्ट्र) 229

रुदाली: मानवीय जिजीविषा की अंतहीन दास्तान

– फरीदा खातून

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दो दशकों में हिन्दी साहित्य के ऐतिहासिक परिदृश्य में विभिन्न विमर्शों का संदर्भ सशक्त रूप से उभरा है। स्त्री-विमर्श एवं दलित विमर्श के साथ ही आदिवासी विमर्श का स्वर तेज होने लगा है परन्तु इस प्रकार के विमर्श के पीछे किसी भी प्रकार की सुनियोजित सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन की भूमिका नहीं रही। आदिवासी साहित्य के आरंभ को लेकर भी भ्रम की स्थिति बनी हुई है। प्रश्न यह भी उठता है कि आदिवासी की परिभाषा क्या है? वर्तमान स्थिति में आदिवासी शब्द का प्रयोग विशिष्ट वातावरण में रहने वाले, विशिष्ट भाषा बोलने वाले तथा अपनी प्राकृतिक संपदा के साथ सामंजस्य स्थापित करके जीवन यापन करने वाले भारत के मूल निवासियों को ही आदिवासी कहा जाता है। प्रो. रामकली सराफ के अनुसार, ''आदिवासी समाज एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाला ऐसा जनसमूह है, जो आदिम जीवन जीता अपनी

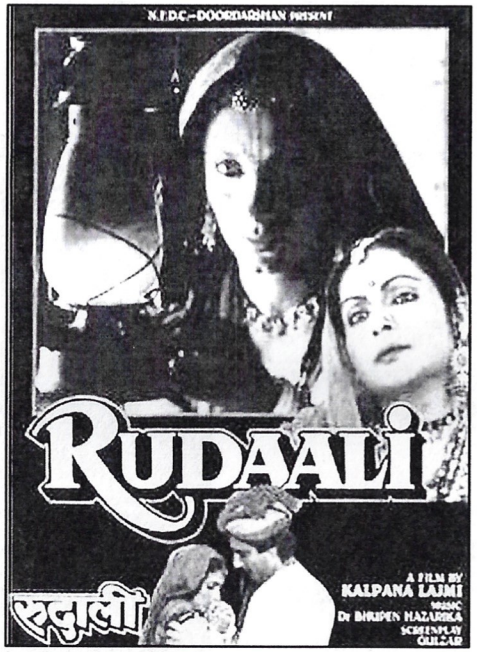

भाषा परंपरा और संस्कृति पर विश्वास रखकर अपनी धरती व प्रकृति के संरक्षण-संवर्द्धन को प्राथमिकता देता है।''[1]

अर्थात एक ऐसा विशिष्ट जनसमूह जो एक खास भौगोलिक क्षेत्र में अपनी भाषा-परंपरा के साथ प्रकृति के साहचर्य में अपना जीवन यापन करता है, उसे आदिवासी कहते हैं।

महाश्वेता देवी भारतीय साहित्य की प्रमुख चर्चित लेखिकाओं में से एक हैं जिन्होंने अपनी लेखनी द्वारा शोषितों, वंचितों एवं मानवीय अधिकारों से उपेक्षितों की व्यथा को मुखर वाणी दी हैं। उनके साहित्य में काल्पनिकता के स्थान पर विश्वसनीय यथार्थ है। वे समाज के ऐसे उपेक्षित पात्रों को अपनी कथा के केन्द्र में लाती हैं जो हाशिए पर जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। जो निरंतर जीवन-संघर्ष में एक बहादुर योद्धा की तरह युद्धरत होकर भी गुमनाम अंधकार में खो जाते हैं। जिनके लिए जीवन का अर्थ दो वक्त की रोटी के लिए कठिन जद्दोजहद है।

महाश्वेता देवी ने अपनी रचनाओं में ऐसे शोषितों एवं उपेक्षितों के मानवीय अधिकारों के लिए आवाज उठायी हैं। तथ्यों, सूचनाओं और जीवंत चरित्रों की खोज में उन्होंने आदिवासी अंचल के कोने-कोने को खंगाला है तथा समाज के सीमांत पर पड़े आदिवासियों के जीवन के ऐसे क्रूर यथार्थ को सामने रखा है जो आभिजात्य रुचि पर जोरदार तमाचा है।

प्रो. शरणकुमार अग्रवाल हाशिए पर जी हरे लोगों की अस्मिता संघर्ष पर विचार करते हुए लिखते हैं– ''वंचितों के पक्ष में संघर्ष करना हम सभी का कर्तव्य है। यह नहीं होना चाहिए कि दलितों के अधिकारों के लिए केवल दलित लड़ें, आदिवासियों के अधिकारों के लिए केवल आदिवासी लड़ें, महिलाओं के अधिकारों के लिए केवल महिला लड़े।''[2]

महाश्वेता देवी ने अपने लेखन में हाशिए पर जीवन जीने वाले समाज के लिए आजीवन संघर्षरत रही हैं। उनका लेखन मनुष्य के जनतांत्रिक मूल्यों की रक्षा का समर्थन करता है।

'रुदाली' एक लंबी कहानी है जो टाहाड़ गाँव के गंजू और दुसाध लोगों के आत्मसंघर्ष एवं मानवीय जिजीविषा को दर्शाता है। कथा की केंद्रीय पा सनीचरी है जो जात की गंजू है। शनिवार को पैदा होने के कारण उसका नाम सनीचरी पड़ जाता है। सास के अनुसार शनिवार को पैदा होने के कारण

उसके भाग्य में इतना दुख बदा है। परन्तु सनीचरी का दुख केवल उसका व्यक्तिगत दुख हो, ऐसा नहीं है। गाँव में अधिकतर लोगों का जीवन सनीचरी की तरह ही दुख के साये में बीता है। सनीचरी बहू की मर्यादा के कारण सास को भले जवाब न दे सकी, परन्तु अकेले में अपने अमंगल होने के तर्क पर अवश्य विचार करती है– ''शनिवार को पैदा होने से सनीचरी नाम पड़ा, बहू अमंगल-मनहूस हो गयी। तुम तो सोमरी थी, किस सुख में जीवन बिताया? सोमरी, बुधनी, मंगरी, बिसरी-किसका जीवन सुख से बीता।''[3]

सनीचरी की तरह अधिकांश गाँव वालों का जीवन दुख एवं अभाव में ही बीता है। सनीचरी की सास श्वेतज्वार से पीड़ित होकर हाय अन्न, अरे अन्न कहते-कहते मर गयी, पर सनीचरी उसे भरपेट भोजन न करा सकी क्योंकि घर में अनाज का एक दाना न था। उस गाँव का मालिक-महाजन रामावतार सिंह एक ढेरी गेहूँ, चोरी हो जाने पर पूरे टाहाड़ गाँव के दुसाधों एवं गंजू मर्दों को जेल भेज देता है। सास के मरने पर उसके दुख में रोने की फुरसत सनीचरी को नहीं थी। दौड़-दौड़कर किसी तरह उसने दाह-संस्कार का कर्तव्य पूरा किया। बरस बीतते-बीतते जेठ-जेठानी भी काल-कवलित हो गए परन्तु जीवन के यथार्थ प्रश्नों के आगे रोने की फुरसत उसे नहीं थी।

''तीन बरस में तीन मर गए। आँसू कलेजे में पत्थर बनकर जम गए हैं–सनीचरी ने मन ही मन में चौन की सांस ली। मालिक-हुजूर का खेत मझाकार जो मोटा-सोटा मिल जाता वही इतने जीवों का सहारा था। दो मर गए, अच्छा हुआ। अब खुद पेट भरकर खायेगी।''[4]

परिवार के सदस्यों के कम होने पर भी जीवन की कठिनाइयाँ कम न हुईं। हैजे में पति चल बसा। कुरुड़ा नदी में माँग का सिंदूर धोकर एवं लाख की चूड़ियाँ तोड़कर उसने वैधव्य को भी स्वीकार कर लिया। पेट का धंधा करते-करते वह अपने दुख में रोने की फुर्सत न पाती थी। पति के मरने पर एकमात्र पुत्र को सीने से चिपटाकर जीवन काटने की सोची परन्तु उसे यक्ष्मा रोग ने ग्रसित कर लिया। सनीचरी सोचती है– ''उसकी छोट-सी इच्छा भी पूरी न हुई। लकड़ी की एक कंघी खरीदेगी, लेकिन उसका खरीदना नहीं हुआ। लाख की चूड़ियाँ एक बरस पहनेगी, न पहन सकी। समय के साथ-साथ इच्छाओं का स्वरूप भी बदल गया।''[5]

वह हर कीमत पर अपने एकमात्र पुत्र को बचाना चाहती है। उसका

भगवान पर से भी विश्वास उठ जाता है क्योंकि अगर भगवान होते तो बुधुआ की बीमारी उसे लग जाती और वह बच जाता परन्तु बुधुआ जानता है कि उसके न रहने पर भी उसकी माँ उसके बेटे को बचा लेगी– ''अब भगवान को नहीं पुकारती रे, भगवान होते तो तेरी बीमारी मुझे लग जाती। नहीं माँ, तू जिंदा रहेगी तो मेरा बेटा रहेगा।''[6]

बुधुआ इलाज के अभाव में मर जाता है। उसकी पत्नी पेट की आग बुझाने के लिए घर छोड़कर भाग जाती है। बुधुआ के मरने पर उसके एकमात्र पुत्र हरुआ को सँभालने तथा अन्य जिम्मेदारियों का बोझ कंधे पर आ जाने से आँसू उसके कलेजे में ही सूख जाते हैं। सनीचरी जैसे लोगों के पास भूख का प्रश्न इतना बृहद है जिसके वृत में अन्य सारे दुख के प्रश्न सिमट जाते हैं। ऐसे दुख के समय सनीचरी के साथ रहने वाले अन्य गाँव वाले भले ही उसके दुख में आँसू नहीं बहाते परन्तु उसकी सहायका अवश्य करते– ''भूखे और घोर गरीब का काम होता है दूसरे भूखे और दरिद्र की सहायता करना। वह मदद न रहे तो मालिक के लिए दूध-घी को खाकर भी गाँव में रहना न होता।''[7]

आदिवासी समाज बहुत सादा और संवेदनशील है परन्तु अधिकारों के हनन प्रक्रिया रे उसके जीवन के कई संवेदनशील पक्षों पर वार किया है। रमणिका गुप्ता लिखती हैं– ''आदिवासी संस्कृति में मनुष्य का जीवन बिल्कुल सादा है। इनका दृष्टिकोण उपयोगितावादी और विचारधारा जियो और जीने दो की है। उपयोगिता के साथ-साथ इनकी कार्य योजना सामूहिक सहयोगिता एवं अनुशासन पर टिकी हुई है।''[8]

महाश्वेता देवी ने यह स्पष्ट कर दिया है कि समाज के निम्नवर्गीय, आर्थिक रूप से पिछड़े हुए लोग में सहज मानवीय संवेदना विद्यमान होती है। स्वयं संकट में होने पर भी वे दूसरों की सहायता कर अपने मानवीय दायित्वों को निभाते हैं।

सनीचरी हर ओर से निराश्रित होकर भी जीवटता के साथ अपने जीवन को जीती है। ऐसे में एक अन्य सहेली बिखनी का साथ उसके जीवन मे सुखकर होता है। सनीचरी की तरह वह भी शोषण की चक्की में पिसी हुई पराश्रित एवं अकेली है। पति, बेटा और नातीविहीन होने पर वे साथ मिलकर एक-दूसरे की शक्ति बन जाती हैं। आजीविका की तलाश में वह दूलन के

पास राय लेने जाती है। वह उन्हें सामंत-जमींदारों एवं उनके नाते-रिश्तेदारों की मौत पर रोने की सलाह देता है। वह कहता है– ''भगवान पेट से बड़ा नहीं है। पेट के लिए सबकुछ किया जाता है।''[9]

मालिक-महाजन के मरने पर उनके लिए भाड़े पर रोने के लिए राड़े आती हैं। सनीचरी एवं बिखनी समझ गई कि रोना बेचकर उन्हें खाना मिलेगा। अतरू जिनके आँखों से अपने दुख पर एक बूँद आँसू न निकले, वे दूसरे के दुख पर छाती पीटकर राते ताकि जितने ऊँचे स्वर का रोना होगा उसकी कीमत भी उतनी ही होगी।

लेखिका ने यह स्पष्ट कर दिया है कि जिन मालिक-महाजनों के लिए शोषित, दलित काम करते हैं, वे अपने आँसू भी बेचने के लिए बाध्य हैं। एक ओर संवेदनहीन तथाकथित सभ्य सामंती वर्ग है जो गरीबों की संवेदना को भी पैसे के बल पर खरीद लते हैं तो दूसरी ओर पेट की समस्या का हल करते हुए ये उपेक्षित, शोषित वर्ग अपनी हृदयगत संवेदना को भी बेचने को विवश हैं। किसी की मौत इन्हें रोजगार का अवसर देती है। इसी कारण कोई रोगी अगर ठीक हो जाए तो इनकी चिंता का कारण बन जाता है। जन्म के साथ मृत्यु भी चलना अनिवार्य है वरना ऐसे रुदालियों का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा। सनीचरी नाई से कहती है– ''तुम्हें क्या कहें, बताओ? जनम में, ब्याह में, मरने में तुम रहते हो। ब्याह की बात उठाने में भी तुम्हारी जरूरत होती है। लेकिन बताओ तो हमारी क्या हालत हुई है।''[10]

बिखनी और सनीचरी को दो रोटियों के लिए कठोरतम संघर्ष करना पड़ता है। दुख ने दो निराश्रित स्त्रियों में साहचर्य भाव को जन्म दिया है। वे आपस में इस तरह मिल गईं जैसे किसी पेड़ की छाल किसी और पेड़ में लग गयी हो।

बिखनी के मरने पर सनीचरी हतप्रभ हो जाती है। उसकी मौत पर उसे दुख हाते है। वह स्वयं नहीं जाती। हाँ, इतना अवश्य जानती है कि बिखनी के मरने पर उसके पेशे पर चोट पड़ी है। सनीचरी अपने जीवन में आए हर दुख को सहज भाव से झेले जाती है। उसके लिए जीवन का अर्थ अपने दुर्भाग्य पर रोना या असंतोष प्रकट करना नहीं बल्कि मेहनत करना है– ''सनीचरी ऐसों का जीवन अंतिम साँस तक मेहनत का जीवन है। उम्र माने बुढ़ापा। बुढ़ापा माने काम न कर पाना। काम न कर पाना माने मौत।''[11]

सनीचरी के जीवन का लक्ष्य अदम्य कर्मठता है। अपने प्रियजनों की मौत पर वह मातम नहीं करती। उसके अनुसार दुख से इन्सान मरता नहीं बिना कुछ मेहनताना पाए रोना विलासिता है।

महाश्वेता देवी ने इस कहानी द्वारा उपेक्षित, दलित एवं आर्थिक रूप से विपन्न लोगों की अस्मिता संकट एवं मानवीय जिजीविषा के साथ ही साथ उन स्त्रियों के भविष्य के प्रति चिंतनशील दिखाई पड़ती हैं जिनकी यौवन की मादकता उनके मालिक, सामंतों के लिए होती है। परन्तु एक उम्र बीत जाने पर वह नदी के तट पर उथले हुए गंदगी से भरी रेत की तरह हो जाती है। दूलन कहता है– ''कहीं इतनी रंडियाँ थीं? यहाँ सारे राजपूत मालिक-महाजन चारों ओर हैं न? उन्हीं से रंडियाँ फैल गई हैं।''[12]

उम्र बीत जाने पर सामंत-जमींदार की रखैले भूखों मरने को विवश हो जाती हैं। अथवा सस्ते दरों पर बिकने वाली वेश्याएँ। ये वेश्याएँ भी मालिक-महाजनों की मृत्यु पर रुदाली बनकर सिर पीटती और रोती हैं तथा अपने रोजगार का मार्ग ढूँढती हैं।

रुदाली कहानी में टाहाड़ गाँव का वह क्षेत्र हर तरह की सुविधाओं से वंचित है। छोटा नागपुर के उस घने बसे अंचल में जमींदार-महाजन घुसकर मालिक बन बैठे। लगभग दो सौ बरस पहले इनके तरह-तरह के अत्याचारों से परेशान होकर कोल लोगों ने विद्रोह किया परन्तु सरकार ने निर्ममतापूर्वक इनके विद्रोह को दबा दिया– ''यह लोग निरीह कोल लोगों को मारते ही रहें, शांत गांवों को जलाते रहे। हरदा और डोनका मुंडा लोगों ने फिर तीर कमान तेज करना शुरू किया। फिर कोल विद्रोह का उपक्रम हुआ। तब राजा ने इन राजपूतों को छितरी बस्ती के टाहाड़ जंगल में उतार दिया।''[13]

टाहाड़ जंगल पर कब्जा करने के बाद ये गाँव राजपूतों की जोत है। ये गाँव आदिवासियों की बस्ती की तरह ही गरीबों की-सी शक्ल है जहाँ खपरैलों की छाजन वाले मैले मिट्टी के घरों को टोली में गंजू-दुसाध रहते हैं। जहाँ न तो यातायात के सुगम साधन हें और न ही उचित चिकित्सा व्यवस्था। सनीचरी का बेटा बुधूआ उचित चिकित्सा के अभाव में यक्ष्मा से ग्रसित होकर मर जाता है। सनीचरी तथा अन्य गाँव वाली का बड़े शहर में जाना नहीं होता। उस गाँव में तीन मील पैदल चलकर बस मिलती है।

''तीन मील पैदल चलकर बस की सड़क मिलती थी। सनीचरी ने वह रास्ता

तय कर बिखनी को जमीन पर बिठा दिया। बोली, सीट पर बैठने के आठ रुपए होते हैं। नीचे बैठकर चली जा दो रुपए दे देना।''[14] अन्य पिछड़े क्षेत्रों के आदिवासियों की तरह इनका जीवन भी हर तरह की सुविधाओं से वंचित है।

पूरी कहानी में महाश्वेता देवी ने टाहाड़ गाँव के गंजू-दुसाध जैसे निम्नवर्गीय समाज की आर्थिक विपन्नता एवं उनके अदम्य जिजीविषा शक्ति को रेखांकित किया है। उनके अनुसार हमारे समाज में वर्ग के अनुसार दुख की परिभाषा बदल जाती है। मालिक-सामंतों के लिए मौत भी एक शानदार तमाशे से कम नहीं। इनके मरने पर इनके रिश्तेदार मातम नहीं मनाते थे बल्कि जायदाद के लिए झगड़ पड़ते थे। रोने के लिए किराए की रुदालियाँ लाना शान-शौकत एवं विलासिता का प्रतीक थी। जो सामंत जीवन-भर गरीबों का खून चूसते हैं, वहीं मरने के बाद भी उनके आँसुओं को भी मोल खरीद लेते हैं। टाहाड़ गाँव के गंजू-दुसाध जैसी जातियाँ हर प्रकार के मानवीय अधिकारों से उपेक्षित है परन्तु जीवन जीने की इनमें अदम्य लालसा है। अपना सबकुछ दाव पर लगाकर भी वे जीवन को बोझ की तरह नहीं बल्कि कर्म की तरह जीते हैं। महाश्वेता देवी की यह कहानी उन समुदायों को सभ्य समाज की रोशनी में ले आती है, जिनके बारे में हम अनभिज्ञ हैं। उनका लेखन वर्तमान राजनीति व्यवस्था एवं सभ्य समाज पर एक तीखा व्यंग्य करता है। वे हाशिए पर जी रहे ऐसे लोगों की सशक्त आवाज हैं। रुदाली कहानी भी गंजू जाति की मानवीय जिजीविषा एवं संघर्ष शक्ति को विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत कर आदिवासी समाज के नए विमर्शों को प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ-सूची

1. प्रो. सराफ, रामकली, आलेख– आदिवासी साहित्यिक परंपरा: अस्तित्व व अस्मिता का संघर्ष, वाङ्मय त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका, संपादक: डॉ. एम. फीरोज अहमद, संयुक्तांक-अप्रैल-सितंबर 2010
2. प्रो. लिम्बाले, शरणकुमार का वक्तव्य– हाशिए का समाज: अस्मिता के सवाल एवं चुनौतीयाँ, लोक और शास्त्र जनजातीय साहित्य, संपादक –डॉ. अनुशब्द, वाणी प्रकाशन, 4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, पृ. 11
3. देवी, महाश्वेता, घहराती घटाएँ (कहानी-रुदाली), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., 2/38, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, पृ. 201

4. वही, पृ. 202
5. वही, पृ. 206
6. वही, पृ. 206
7. वही, पृ. 210
8. गुप्ता, रमणिका(संपा), आदिवासी कौन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि., 2/38, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, संस्करण: 2008, पृ. 8
9. देवी, महाश्वेता, घहराती घटाएँ (कहानी-रुदाली), राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., 2/38, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, पृ. 217
10. वही, पृ. 232
11. वही, पृ. 238
12. वही, पृ. 221
13. वही, पृ. 221
14. वही, पृ. 234

❑

प्रो. डॉ. शशिकांत 'सावन'

(डी.लिट.)

◆**जन्म :** 25 जनवरी, 1969 (महाराष्ट्र)

◆लोक साहित्य, संस्कृति, कलाओं तथा हिन्दी जगत् के प्रमुख हस्ताक्षर

◆भारतीय साहित्य, भाषा तथा बौद्ध दर्शन के विशेष अध्येता।

◆विश्व राष्ट्रभाषा प्रचार-प्रसार एवं साहित्य को समर्पित व्यक्तित्व।

◆14 बृहत शोध ग्रंथों तथा 70 शोध लेखों के रचयिता।

◆सावन के संग भीगे शब्द रंग (चित्र-काव्य सर्जना), भारतीय स्त्री आत्मकथन साहित्य, दलित साहित्य, भारतीय आदिम लोक-साहित्य, भारतीय उपेक्षित लोक संस्कृतियाँ, आधुनिक हिन्दी साहित्य, भारतीय साहित्य एवं साहित्यकार: अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य, मशालें मानवता की जलाओ, साथियों!, 'सदी का हिंदी सिनेमा और साहित्य', 'भारतीय सिनेमा का साहित्य सौंदर्य' जैसी पुस्तकें देशभर में चर्चित।

◆भारतीय साहित्य, कला एवं संस्कृतियों पर राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों तथा संगोष्ठियों में व्याख्यान और शोधालेख प्रस्तुति।

◆भारत विद्या रत्न, राष्ट्रभाषा आचार्य, डॉक्टर ऑफ लेटर्स (यू.एस.ए)

◆ग्लोबल ब्रिलियन्स अवार्ड, आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी महाराष्ट्र हिन्दी साहित्य अकादमी सम्मान जैसे राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय उपाधियों से सम्मानित।

◆यू.जी.सी. के मेजर (01), मायनर (02) रिसर्च प्रोजेक्टस के मुख्य अनुसंधाता।

◆भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, राष्ट्रपति भवन, शिमला के असोशिएट।

◆शोध निदेशक, उत्तर महाराष्ट्र विश्वविद्यालय जलगांव, प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग प्रताप महाविद्यालय, अमलनेर-425401 (महाराष्ट्र)

◆**संपर्क :** तक्षशिला, प्रताप मील एरिया, अमलनेर, (महाराष्ट्र)

(भ्रमणध्वनि-9145731621, 9423186115)

◆**E-mail:** professorsaawan@gmail.com

AYAN PRAKASHAN

अयन प्रकाशन

साहित्य संस्कार के 42 वर्ष

ISBN 978-93-91378-18-9